राजस्थान लोक संगीत से जुड़ी पेशेवर जाति : मांगणियार

*डॉ. वन्दना कल्ला

राजस्थान का लोक संगीत आज विश्व में सभी जगह अपना अस्तिव व आकर्षण बनाये हुए है। इस संगीत को अपनाने वाली हमारी ग्रामीण जातियाँ हैं जो आज भी अपनी सांस्कृतिक परम्परा को समेंटे हुए है। राजस्थान की इन्हीं पेशेवर जातियों में प्रदेश के पश्चिमी सीमावर्ती क्षेत्र में बसी मांगणियार जाति अपनी गायकी के लिये महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस जाति के परिवार बाड़मेंर, जैसलमेंर एवं जालौर के अतिरिक्त पाकिस्तान में आबाद है। इस जाति पर हिन्दू व मुस्लिम दोनों जाति की संस्कृति का मेंल देखने को मिलता है। इस कारण इनका रहन–सहन, वेशभूषा दोनों में इन धर्म का सामंजस्य है। इसलिये ये दीपावली व ईद दोनों धूमधाम से मनाते हैं।

इस जाति की उत्पत्ति के लिये भिन्न–भिन्न किंवदन्तियां रही है किन्तु एक कथन प्रसिद्ध है कि ये क्षत्रिय वर्ण के हैं। जब परशुराम ने सम्पूर्ण पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन करने की प्रतिज्ञा की तब उनके भय से आतंकित होकर कुछ क्षत्रियों ने क्षत्रियत्व त्याग कर गाने बजाने का पेशा अपना लिया। इसीलिये क्षत्रियों की संतति गाने बजाने के साथमांग कर खाने लगे इस कारण ये मांगणयार कहलाये।

इनका मुख्य व्यवसाय संगीत ही है। अतिरिक्त समय में खेती व पशुपालन का काम भी करते हैं। इनमें शिक्षा का प्रचार बहुत कम होने से इनका शिक्षित वर्ग बहुत कम है। इन लोगों के अपने गाँवों में ही प्रतिष्ठित व्यापारी या अन्य उच्च वर्गीय लोक जजमान होते हैं जिनके घरों में शादी ब्याह या अन्य संस्कारों में गाने बजाने से अच्छी राशि मिल जाती है और अपना जीवन निर्वाह करते रहते हैं। इनका प्रसिद्ध लोकप्रिय वाद्य कमाँयचा है जिसे ये अपनी गायकी के साथ संगति के रूप में प्रयोग करते हैं।

यह जाति प्रमुखतः वाद्य वादन में विशिष्ट स्थान रखती है। इनकी गायकी अपनी सीमा को पार कर उपशास्त्रीय संगीत की रेखा को छूती हुई चलती है। अतः इनकी गायकी न तो स्पष्ट लोक संगीत कही जा सकती है ना ही पूर्णतया शास्त्रीय संगीत। इनकी गायकी में शास्त्रीय संगीत का आभास भी होता है।

इनके गायन में गायक की तान, डेढ़ सप्तक तक की सपाट तान व मुर्कियों का भरपूर सहयोग होता है। कमांयचा के अतिरिक्त इस जाति के कलाकार खड़ताल, सुरमंडल, सुरणई, ढोल एवं ढोलक वाद्यों का वादन करते हैं। फलस्वरूप इनका गायन विभिन्न लयकारियों से पूर्ण होता है।

ये लोग रावण हत्थे का भी इस्तेमाल करते हैं जो पाबूजी की कथा के गायन के साथ किया जाता है। मांगणियार जाति के लोग कृष्ण भक्ति के साथ लतीफ, फरीद और बुल्लेशाह के गीत भी गाते हैं।

मांगणयारों का वाद्य कामांयचा, कमाँचा अथवा कमोगा है और यह तीन नाम से पुकारा जाता है। इस वाद्य का आगमन भारत में मुसलमानों के साथ हुआ है। यह वाद्य ईरानी वाद्य है। इस वाद्य का प्रचार मध्य एशिया तथा उसके आसपास के देशों में पर्याप्त रूपसे मिलता है।

यह सारंगी की तरह लगता है किन्तु बनावट भिन्न होती है। सारंगी की तबली लम्बी होती है व गोल होती है जिसके डेढ़ फुट चौड़े तबले परचमड़ा लगा दिया जाता है। इसे गज (ठवू) द्वारा बजाया जाता है। इसकी आवाज में भारीपन होता है। इस वाद्य को बजाने वाले माणंयार जाति के कुछप्रसिद्ध कलाकार है जिन्होंने राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त की है। नाना खान जो बाड़मेंर के हैं जिन्होंने अपने जीवन में 25 कार्यक्रम दिये हैं। पठान खां मांगणयार भी बाड़मेंर के हैं जिन्होंने 22—26 कार्यक्रम दिये हैं।

तीसरे प्रसिद्ध कलाकार आबू खान ने 25 कार्यक्रम दिये हैं इन्हें मंच प्रदान कर आगे तक ले जाने का श्रेय परम श्रद्धेय स्व. कोमल कोठारी जी को जाता है जिन्होंने अपना जीवन राजस्थान के लोक कलाकार और संस्कृति को दिया।

*संगीत विभाग, महारानी कॉलेज, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर